जीवन मदिरा

जीवन मदिरा

जाम पर जाम पीने से क्या फायदा
रात बीती सुबह को उतर जायगी ।
यह फकीरी जाम पी ले
तेरी सारी जिन्दगी सुधर जायगी ।।

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद

संत श्री आशारामजी महाराज

★ निवेदन ★

यह आत्मज्ञान की उच्च साधना विहंगमार्ग कहलाता है। आत्मज्ञान के प्यासे, विवेक-वैराग्यवान साधकों के लिये यह पुस्तक वायुयान का काम करेगा। पूज्यश्री के अनुभवयुक्त वचन देह की आसक्ति, मानसिक दुर्बलताएँ छुड़ाकर आत्म-सिंहासन पर बिठा देते हैं।

अतः इस पावन पुस्तिका को अपने साथ रखें, बार बार पढ़ें और धन्य धन्य हो जायें। यही आपको प्रार्थना है.......

– श्री यो. वे. से. समिति

प्रकाशक
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आशाराम आश्रम
साबरमती, अहमदाबाद-५.

प्रथम आवृत्ति : नवम्बर १९८४ प्रत : ६०००

मूल्य : रू. १-२५

मुद्रक :
अजन्टा मुद्रणालय, अजमेरीवाला कम्पाउन्ड, अहमदाबाद-२२.
आवरण
नटवर स्मृति प्रिन्टर्स, रायपुर, अहमदाबाद

जीवन मदिरा

आत्मज्ञान की गरिमा

औरंगज़ेब के जमाने में सरमद नामके एक मस्त फकीर हो गये। औरंगज़ेब चुस्त था नमाज पढ़ने में। हर जुम्मे के दिन दिल्ली की जुम्मा मस्जिद में वह पहुँचता था। उनके चमचों ने उसको बहका दिया कि सरमद नामका फकीर खुदा को नहीं मानता है, नमाज नहीं पढता है।

यह सुनते ही औरंगज़ेब के अहं को चोट लगी: 'मेरे जैसा सम्राट खुदा को मानता है और यह फकीर नहीं मानता? मेरे राज्य में रहता है फिर भी....?'

उस बेवकूफ को पता नहीं कि फकीर अपने आपके राज्य में रहते हैं। अहंकारी समझता है कि फकीर मेरे राज्य में रहते हैं।

औरंगझेब ने हुक्म कर दिया: 'सरमद को आदेश दे दो कि अगले जुम्मा को वह नमाज के लिये मस्जिद में हाजिर हो जाय।'

सरमद को पता चला। वे आ गये जुम्मा मस्जिद में। नमाज पढ़ानेवाले इमाम के आगे नमाज पढ़नेवाले लोगों की कतारें थीं। आगे औरंगझेब था। पीछे की कतार में सरमद थे। नमाज पढ़ी जा रही थी। लोग घुटने टेककर सिजदा कर रहे थे। सबके साथ सरमद ने भी सिजदा किया और चिल्लाये:

'इमाम का खुदा सरमद के पैरों तले है।'

ऐसा कहकर वे अपनी मस्ती में, मौज में चल दिये बाहर। औरंगझेब ने सुना। नमाज के बाद पूछा: 'वह काफर कहाँ गया? बोलता था कि खुदा सरमद के पैरों तले है। यह तो खुदा का अपमान हो गया।'

उसको पता ही नहीं कि खुदा का अपमान कोई कर ही नहीं सकता। खुदा का मान-अपमान क्या होता है? मान-अपमान अहंकार को होता है। खुदा का मान-अपमान हो ही नहीं सकता। लेकिन जो अहंकार में जीता है वह खुदा को भी अहंकार की तराजू में तोलता है। जो देह में जीता है वह खुदा को भी देह मानता है।

उस देहाभिमानी ने आदेश दे दिया कि सरमद का गला काट दिया जाय। नौकर तो चिट्ठी के चाकर।

ढूंढ लिया सरमद को। ले गये यमुना किनारे और तलवार से उसका मस्तक उडा दिया।

मस्तक भूमि पर गिर पड़ा। रक्त की बूंदें यमुनाजी में पड़ी तो यमुनाजी का पानी उछल पड़ा। बिना बारिश नदी में बाढ़ आयी। सरमद का मस्तक लुढकता लुढकता दिल्ली शहर की ओर आगे बढ़ा। पीछे पीछे यमुनाजी का पूर उमटा। सारे शहर को डूबाने के लिये चल पड़ा। मस्तक औरंगझेब के तख्त की ओर जाने लगा। पूरे दिल्ली शहर में पानी का खतरा फैलने लगा।

दूसरा एक फकीर था। उसने मस्तक को कहा: भाई सरमद! फकीर लोग मूर्खों पर, नादानों पर इतना क्रोध नहीं किया करते। धीर पुरुष क्षमाशील होते हैं। सरमद! इसको माफ कर दो।'

सरमद का मस्तक रुक गया। यमुनाजी का पूर भी वापस लौट गया। औरंगझेब को पता चला। उसका पहचानवाला कोई अमीर उसके पास गया और कहा:

'जहाँपनाह! हम लोगों ने सरमद को समझने में कोई गलती की है।'

'नहीं, गलती नहीं की है। मैंने अपने कानों से सुना है।' औरंगझेब बोला।

'शहनशाह! आपने क्या सुना है?'

'सरमद बोला था कि खुदा मेरे पैरों तले है।'

'नहीं । इमाम का खुदा मेरे पैरों तले है—ऐसा सरमद का वचन था ।'

'इमाम का खुदा पैरों तले कैसे ?'

'उस इमाम को बुलवाइये और जाँच कीजिये । फकीर के वचनों में कुछ न कुछ राज़ होता है ।'

ब्रह्मवेत्ता के लिये, ईश्वरीय मस्ती में झूमनेवालों के लिये पूजापाठ, नमाज और कर्मकांड कोई जरूरी नहीं है । ये तो चौबीसों घण्टे ईश्वर में मस्त रहनेवाले होते हैं। इनकी वाणी ईश्वर की वाणी होती है, खुदा की वाणी होती है ।

इमाम को बुलाया गया और पूछा गया कि : 'सच बता । तू सिजदे के वक्त क्या कर रहा था ? क्या सोच रहा था ? तेरे मन में क्या था उस समय ?'

इमाम घबड़ाते हुए हाथ जोड़कर बोला :

'जहाँपनाह ! क्षमा करें । अभयदान दें । मैं सच बताता हूँ । मेरी बेटी बड़ी हो गई है । मुझे धन की खूब आवश्यकता है। मैं गरीब हालत में जीता हूँ। नमाज पढते वक्त, सिजदा करते समय मन में हुआ कि हे खुदा ! कुछ धन मिल जाय तो बच्ची के हाथ रंग जाय ।'

अमीर ने कहा : 'देखोजी ! सिजदे के समय इमाम का खुदा धन ही था । सरमद ने कहा कि इमाम का खुदा सरमद के पैरों तले दबा है । अब, सरमद ने जहाँ खड़े होकर सिजदा किया वह जगह खुदवाई जाय ।'

वह जगह खोदी गयी तो वहाँ से सुवर्ण के चरूओं में अशरफियाँ भरी हुई मिली ।

औरंगझेब को बड़ा पश्चात्ताप हुआ लेकिन अब क्या ? एक सच्चे फकीर का घात करवाने का पाप अंत समय तक औरंगझेब का दिल कुरेदता रहा । मरते समय भी उसको इसी बात का पश्चात्ताप होता था कि मैंने बड़ी गलती की ।

हे मानव ! तू अपनी महिमा में जाग जा ! फिर तेरे शरीर के साथ कोई अन्याय करेगा तो प्रकृति उसको जीवन भर तड़पा तड़पाकर उस अन्याय का बदला दे देगी। दुनियाँ तेरे साथ अन्याय करे, तेरा अपमान करे, तुझे दुःख दे, तेरी मजाक उडाये तो तू उनको ठीक करने में मत लग । तू अपने स्वरूप में, अपने आप में ठीक तरह से आ जा। फिर प्रकृति उनकी बुद्धि को बदल देगी अथवा उनका विनाश हो जायगा ।

मित्रों को राजी करने में, शत्रुओं को ठीक करने में अपना समय मत गँवा। परम मित्र जो है तेरा परमात्मा, उसीमें जाग जा। ब्रह्मानन्द की मदिरा पीकर मस्त हो जा। आत्मानन्द के नशे से जीवन को लदबद कर दे। परम शत्रु जो है तेरा अहंकार, उसको पीठ दे दे। उससे मुँह

मोड़ ले । बस, इतना ही तेरा कर्तव्य है । और सब ठीक हो जायगा । ॐ...... ॐ........ ॐ........

★ ★ ★

आत्मयोग

स्वप्नसृष्टि अपनी कल्पनारूप है, निद्रादोष से भिन्न भासती है, उसमें रागद्वेष उपजता है । जागने पर सब क्षोभ मिट जाते हैं । उसी प्रकार अज्ञान से जगत सत्य लगता है, उसमें रागद्वेष भासते हैं । ज्ञान होने से सब शान्त हो जाता है ।

ज्ञान और सच्ची शिक्षा सब की सब भीतर से निकलती है, पुस्तकों और बाहरी मस्तिष्कों से नहीं । इसलिये हे भोले महेश ! भीतर छलांग मार । अपने आप में आ । व्यवहार करते समय अपने आपसे पूछा कर : 'मैं कौन हूँ ? आखिर यह तिकड़मबाजी कब तक चलाता रहूँगा ?' कान बहरे हो जायें, आँखें निस्तेज हो जायें, शरीर जीर्ण शीर्ण हो जाय, कुटुम्बी और मित्र मुंह मोड़ने लग जायें उसके पहले तू अपना असली मुँह देख ले । अपना मित्र देख ले । देर क्यों करता है भैया ? लोगों को रिझाने में क्यों पड़ा है ?

हिम्मत कर ! साहस कर ! मार छलांग ! मंजिल दूर नहीं है । शाबाश.......वीर........शाबाश............!! ॐ.........ॐ.......ॐ.........

बीते हुए व्यवहार और जीवन को स्वप्नतुल्य समझो । जो बीत रहा है वह भी तो स्वप्न है ! जो बीतेगा वह भी स्वप्न ! इन सबको देखनेवाला स्वरूप है अपना ।

अपने आपको शरीर और उसके अड़ोस पड़ोस से उपर उठाओ । मन और उसकी इच्छाओं से, संसार और उसकी संमतियों से तुम उपर स्थित रहो ।

सूर्यों का सूर्य मैं हूँ । प्रकाशों का प्रकाश मैं हूँ । मैं राजाओं का राजा हूँ। बुरे विचारों और सांसारिक इच्छाओं को मेरे सन्मुख आनेका अधिकार नहीं है । बड़े से बड़ा भी मैं हूँ और नीच से नीच भी मैं हूँ ।

अपने प्रति सच्चे और निर्मल बनो । अपने अनुभव के अनुसार जीवन बनाओ । अपने अनुभव से अधिक प्रवीण और कोई शिक्षक संसार में नहीं है । तुम्हारा अनुभव है कि अपने आपको तुम छोड़ नहीं सकते और संसार को रख नहीं सकते । प्रतिदिन संसार के हर पदार्थ को, प्रिय में प्रिय व्यक्ति को, विषय को छोड़ते हो तभी नींद करते हो । जाग्रत, स्वप्न और नींद तीनों आते जाते हैं, लेकिन उसका अनुभव करनेवाले तुम तीनों में एक के एक । तुम अपने आपको छोड़ नहीं सकते और जगत को सतत

रख नहीं सकते । यह आपका अनुभव नहीं है ? अतः अपने अनुभव के खजाने को पा लो ।

दूसरों का हित करने की और दूसरों से सम्मानित होने की चाह ही हमको आकर्षण केन्द्र से बाहर कर देती है । 'सर्वभूतहिते रताः' ऐसे ज्ञानवान से स्वाभाविक ही हित के कार्य होते रहते हैं । उन्हें हित करनेकी और सम्मानित होनेकी चाह नहीं रहती ।

चारों ओर, अनन्त भविष्यमें, सम्पूर्ण देश में केवल एक ही परमात्मा का अस्तित्व है । फिर डर किसका हो ?

बुखार आने पर मैं विकल नहीं होता । मित्रवत् उसका स्वागत करता हूँ । उस समय ऐसे आध्यात्मिक तत्त्व चमक उठते हैं जो अन्यथा कभी प्रकट नहीं हो सकते थे । हरेक दशा स्वास्थ्यरूप है ।

जिस तरह मछलियाँ जलराशि में ही रहती हैं उसी तरह तुम आत्म-प्रकाश-निधि में ही रहो, आत्मप्रकाश में ही चलो फिरो, अपना अस्तित्व आत्मप्रकाश में ही रखो ।

सारा विश्व मुझ में समाया हुआ है । सारी दुनियाँ मैं हूँ, सब मेरा ही रुधिर मांस है । ॐ.......ॐ.....!

अपना निरीक्षण ही वास्तविक सत्संग, स्वाध्याय और अध्ययन है । आत्म-निरीक्षण के बिना कोई भी सद्ग्रन्थ तथा सद्गुरु से मिला प्रकाश अपने काम नहीं आता ।

शागिर्द हैं तो हम हैं, उस्ताद हैं तो हम हैं । हमारे स्वरूप की एकता में कभी अन्तर नहीं आ सकता । सागर

में लाखों तरंगें होने दो, सागर की एकता में अन्तर नहीं आ सकता ।

अविश्वास और धोखे से भरा हुआ संसार वास्तविक सदाचारी सत्यनिष्ठ साधक का कुछ भी बुरा नहीं कर सकता ।

सड़क पर जाते हुए जब किसी मनुष्य को तुम देखो, जो प्रतिष्ठित हो, चाहे इंग्लैन्ड का सम्राट हो चाहे रूस का जार हो चाहे यूनाइटेड स्टेट्स का प्रेसिडेन्ट हो, तो किसी तरह की ईर्ष्या या भय का विचार अपने मन में न आने दो । उसकी शाहाना नजर को अपनी ही दृष्टि समझकर मजे लूटो : 'मैं वही हूँ, अन्य कोई नहीं ।' जब तुम ऐसा अनुभव करने की चेष्टा करोगे तब तुम्हारा अपना अनुभव यह सच्चा सिद्ध कर देगा कि सब एक हैं ।

निर्भयता से प्रसन्न चित्त होकर सत्य के सागर में प्रवेश करो । डरते और घबड़ाते क्यों हो ?

दुःखों का ख्याल करनेवाला दुःख और कष्ट अपने उपर लाता है । सब का शुभ चिन्तक स्वयं सब हो जाता है ।

अगर सूर्य मेरी दायीं तथा चाँद मेरी बाईं ओर आकर धमकाने लगे कि पीछे हट जाओ, तब भी मैं पीछे नहीं हटूंगा । मैं अपने शुद्ध लक्ष्य को पाकर ही रहूंगा ।

छूई मूई का छोड़ नहीं,
जो छूने से मुरझा जाता है ।
मैं वो माई का लाल नहीं,
जो हौवा से डर जाता है ॥

ईश्वर की नांई प्रत्येक शक्ति, प्रत्येक परमाणु, प्रत्येक तारा और वृक्ष पर अपना स्वत्व क्यों स्थापित नहीं करते ? यही वेदान्त है।

मुझे नितान्त स्मरण नहीं कि मैं कभी पैदा हुआ था। निस्सन्देह मैं कभी पैदा नहीं हुआ था, और संसार में ऐसी कोई शक्ति नहीं जो मुझे निश्चय करा सके कि मैं कभी मर सकता हूँ। मैं मरना और जीना दोनों को देखनेवाला हूँ। सुख और दुःख मुझ ही द्दष्टा से गुजरते हैं। हजारों शरीरों की मौत होने पर भी मैं कभी नहीं मरा, कभी नहीं जन्मा। मैं चिदाकाशस्वरूप हूँ। ॐ... ॐ....ॐ...।

जो इस सत्य को, इस अनुभव को अपना अनुभव बनाता है उसका दर्शन करके यक्ष, गंधर्व, किन्नर और देव भी अपना भाग्य बनाते हैं। हे मानव! अपने को देह मानने की गलती छोड़। अपनी असलियत में जाग जा। तेरे बाप का क्या बिगड़ता है ?

जो समग्र संसार के साथ अपने को अभिन्न अनुभव करता है उसके साथ काम करने के लिये समग्र संसार बाध्य होता है।

जितने भी चराचर पदार्थ हैं, वे सब मिथ्या हैं, अवस्तु मात्र हैं। धिक्कार है उसे जो दिखावटी रूपों पर सत्य को न्योच्छावर कर देता है।

मैं सत्य हूँ। मैं देह की प्रतिष्ठा बढाने के लिये आत्मघात करने को कदापि तैयार नहीं हो सकता।

हरगिज मत सोचो कि तुम कभी भी नीचे घसीटे जाओगे अथवा नीचे ढकेल दिये जाओगे।

तुम्हारे चित्त में ऐसा आत्मनशा होना चाहिये कि उसमें पड़ते ही दुनियाँदारी के तुच्छ विचार गल जाय। तुम्हारी उन्नति निश्चित है। तुम्हारा निहाल होना स्वाभाविक है। ॐ....ॐ...ॐ...ॐ!

यदि सब वस्तुओं में ब्रह्म को देखने में तुम सफल न हो तो कम से कम एक ऐसे व्यक्ति में कि जिसको तुम सबसे अधिक प्रेम करते हो, उसका दर्शन करने की चेष्टा करो। इसी प्रकार तुम आगे बढ सकते हो।

थकावट के सभी अवसरों पर ॐ का उच्चारण करो। ॐ...ॐ....!

यह सारा लौकिक और वैदिक व्यवहार अविद्या का ही विषय है।

परमात्मा पर विश्वास रखकर अपनी जीवन डोरी उसके चरणों में सदा के लिये बाँध दो। फिर निर्भयता तो तुम्हारे चरणों की दासी बन जायगी।

अपने पूर्ण अन्तःकरण से कहो: 'अहं ब्रह्मास्मि।' मैं ही ब्रह्म हूँ।

अपने आपको नित्य शान्त और प्रसन्न रखना इसको ही अपने सारे उद्योग-धंधा, व्यापार-पेशा, वृत्ति और जीवन का एकमात्र लक्ष्य और उद्देश्य बना लो। इस संसार में आपका परम पावन कर्तव्य यही है जो आप पर ईश्वर ने डाला हुआ है। अपने आपको प्रसन्न रखना है। इसके सिवाय अन्य किसी बात की परवाह मत करो।

किसी के दोष को देखकर उससे घृणा न करो और न उसका बुरा चाहो। दूसरे के पापों को प्रकट करने के बदले सुदृढ़ बनकर ढको।

'मैं सर्वशक्तिमान परमेश्वर हूँ, विश्व-ब्रह्माण्ड का शासक हूँ, प्रभुओं का प्रभु हूँ, देवों का देव हूँ और संसार के भूतों का अध्यक्ष और अधिष्ठाता हूँ।' ऐसा निश्चय करो फिर तुम्हें कोई हानि या क्षति नहीं पहुँचा सकेगा।

त्याग का अर्थ वैराग्य या वानप्रस्थपना नहीं है। त्याग का अर्थ प्रत्येक वस्तु को पवित्र बनाना है। बल्कि उसे ईश्वर समझना है। प्रत्येक वस्तु में परमात्मा का दर्शन करना, नाम-रूप की ममता का बाध करना ही वेदान्त के अनुसार त्याग है।

एक मैं ही मैं हूँ यह जो ज्ञान है।
द्वैत नहीं फिर सोच का क्या काम है॥

जब आप कोई काम करके लोगों की समालोचनाएँ और अपने अनुकूल आलोचनाएँ तथा लोगों की तारीफें

व लोगों की खुशामदें अंगीकार करते हैं तब आपकी शक्ति तुरन्त जाती रहती है।

जब तुम आत्मा से विमुख होगे तब सब पदार्थ तुम्हें छोड़ जायेंगे। जब तुमने अपने अंतरात्मा का दृढ निश्चय से आश्रय कर लिया तब सारा संसार कुत्ते के समान तुम्हारे पैर चाटने की इच्छा करेगा। संसार के पीछे मत दौड़ो।

यदि आप अपना यह विश्वास बना सकते हैं कि 'आप सदैव से मुक्त हैं' तो आप विश्व-ब्रह्माण्ड के उद्धारक हो जाते हैं। यदि आप यह निश्चय करें कि 'आप शरीर कभी नहीं थे,' यदि आप वेदान्त के स्वर में स्वर मिलाकर विश्वास करें कि 'आप सदैव से मुक्त हैं' तो आप अखिल जगत के मोक्षदाता हो जाते हैं।

'मैं सर्व हूँ, मैं अखिल विश्व हूँ, मैं अनन्त हूँ' ऐसा अनुभव जब आप करने लगते हैं तब आप समग्र हो जाते हैं और शारीरिक रोग, पीड़ा, व्यथा, चिन्ता तक दूर हो जाती है, उड जाती है, छिन्न भिन्न हो जाती है।

यदि संसार के दूसरे पदार्थ या सुख आ मिलते हैं तो तुम्हें कहना चाहिये कि 'अय शैतान! हट मेरे सामने से। तेरे हाथों से मुझे कुछ नहीं चाहिये।' तब देखो, तुम कितने सुखी होते हो! तब तुम स्वयं स्वर्ग हो जाते हो।

बाहरी पदार्थों की अपेक्षा सत्य पर अधिक विश्वास रखो। अपनी इन्द्रियों के बहकावे में मत आओ।

सारा ब्रह्माण्ड एक शरीर है। सारा संसार एक शरीर है। जब तक आप हर एक से अपनी एकता का अनुभव करते रहेंगे तब तक सभी परिस्थितियाँ और आसपास की चीजें, हवा और लहरें तक आपके पक्ष में रहेगी।

अपने परिश्रमों के पुरस्कार के लिये चिन्ता न करो। भविष्य की परवाह मत करो। संशयों को त्याग दो। सफलता असफलता का विचार न करो।

अपने ईश्वरत्व में सजीव विश्वास रखो, फिर कोई तुम्हारी हानि न कर सकेगा। कोई भी तुम्हें क्षति न पहुँचा सकेगा।

जिस क्षण तुम ईश्वर भाव से परिपूर्ण हो जाओगे उसी क्षण अनायास सदा के लिये जीवन, शक्ति और उत्साह की धारा बहने लगेगी। सत्य को फैलाने का यही उपाय है।

जो कोई तुम्हारे पास आवे उसे परमेश्वरवत् ग्रहण करो। पर साथ ही साथ अपने को भी तुच्छ मत समझो।

पेट में अधिक ठूंसना, अनुचित भोजन करना सारे पापों की जड़ है। अतः अपने भोजन के सम्बन्ध में सदा सावधान रहो और तुम अपने रोग को अच्छा कर लोगे।

बाह्य दुःखों और चिन्ताओं को आनन्द से आने दो अड़ोस पड़ोस में ही वेदान्त को व्यवहार में लाओ।

अद्वैत अवस्था में देखने, सुनने और समझने की कोई चीज ही नहीं रहती। सब कुछ आत्मा ही हो जाता है।

★ ★ ★

तुम कल्याण स्वरूप हो

एक बार अपना कल्याण हो जाय फिर पता चलेगा कि मेरा कभी अकल्याण हुआ ही न था। जिस देह का, जिस इन्द्रियों का, जिस कर्मों का मुझे मोह था उन्हीं का ही कल्याण अकल्याण दिख रहा था। मैं तो परम कल्याण स्वरूप ही हूँ।

'ईश्वर की माया है' यह भी साधक को समझाने के लिये है।

एक पिता अपने तीन बेटों को बुलाकर अपनी संपत्ति का बँटवारा सुना रहा था :

'मेरी आखिरी घड़ियाँ हैं। मेरी संपत्ति में १७ घोड़े हैं। उनमें से $\frac{1}{2}$ हिस्सा, सबसे छोटा बेटा है जिस पर मेरा ज्यादा स्नेह है उसको मिले। दूसरे नंबर के बेटे को $\frac{1}{3}$ हिस्सा मिले और सबसे बड़े बेटे को $\frac{1}{9}$ हिस्सा मिले।'

पिता चल बसे। घोड़े १७ थे। पिताजी के कहे अनुसार १७ घोड़ों का बँटवारा $\frac{1}{2}$, $\frac{1}{3}$ और $\frac{1}{9}$ हिस्से में कैसे हो? १७ घोडों का $\frac{1}{2}$ हिस्सा = $8\frac{1}{2}$ घोडे, $\frac{1}{3}$ हिस्सा = $5\frac{2}{3}$ घोड़े और $\frac{1}{9}$ हिस्सा = $1\frac{8}{9}$ घोड़े। घोडों को इस प्रकार कैसे बाँटें? तीनों उलझ गये।

तीनों ने मिलकर एक सयाने बुझर्ग को अपनी समस्या सुनायी। वे बुझर्ग अपना घोड़ा लेकर इनके घर आये। उनके १७ घोड़ों में अपना घोड़ा मिला दिया तो १८ घोड़े हो गये। फिर तीनों को पूछा :

'आपको पिता ने कहे हुए हिस्से से ज्यादा मिलेगा तो चलेगा?'

'हाँ हाँ, चलेगा।' तीनों ने कहा।

उन बुझर्ग ने सबसे छोटे बेटे को १८ घोड़े का $\frac{1}{2}$ हिस्सा अर्थात् ९ घोड़े दे दिये। दूसरे को १८ का $\frac{1}{3}$ हिस्सा अर्थात् ६ घोड़े दे दिये। सबसे बड़े बेटे को १८ का $\frac{1}{9}$ हिस्सा अर्थात् २ घोड़े दे दिये। बाकी बचा हुआ एक घोड़ा लेकर बुझर्ग चलते भये तो लड़के बोले : 'यह एक घोड़ा?'

बुझर्ग ने जवाब दिया : 'यह घोड़ा तुम्हारे बाप का कहाँ था? यह तो हिसाब मिलाने के लिये मैं अपना घोड़ा लाया था।'

ऐसे ही शास्त्र, संत, भगवान आपको जगाने के लिये माया रूपी घोड़ा ले आये हैं। 'यह सब ईश्वर की माया है...'

संसार का शरीर संसार की सेवा में लगा दो, सूक्ष्म शरीर सूक्ष्म चिन्तन में लगा दो, कारण शरीर कारण में मिला दो। फिर आप बच गये शुद्ध स्वरूप........ आत्म-परमात्मस्वरूप। क्यों, ठीक है न?

तुम ऐसे बुझर्ग हो। कई सदियों से, कई जन्मों से जन्म मरण का खेल खेलते आये हो। आज तक तुम्हारा कुछ बिगड़ा नहीं। अय कलाओं के मालिक! अपनी गरिमा को जान लो। दया करो। संतों पर और भगवान पर कृपा करो। अपना खजाना पा लो।

ॐ....ॐ...ॐ....

★ ★ ★

गुरुप्रसाद

ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु द्वारा दीक्षा ग्रहण किये हुए और नियमित गुरुनिर्दिष्ट मार्ग पर साधना, ध्यान, भजन, जप आदि करनेवाले साधक के जीवन में ऐसी घड़ियाँ आती हैं कि जब उसका चित्त संसार को भूलकर कोई एक

शांतिमय प्रदेश में पहुँच जाता है । वहाँ आत्मानंद में निमग्न हो जाता है, स्वरूप स्थिति को प्राप्त होता है । उसकी इन्द्रियाँ अंतर्मुख हो जाती हैं । अंतःकरण इच्छा-वासनाओं से रहित निर्मल हो जाता है ।

आत्मस्वरूप में स्थित, परमात्मा के आनंद में मस्त मन से अधिक पवित्र कोई मंदिर नहीं है । अतः हे प्यारे साधक ! अपने मन को परमात्माके चिन्तन में डूबाकर आनन्द से सराबोर कर दे । इसके अलावा और कोई कर्तव्य तेरे सिर पर नहीं है । यदि अन्य कोई कर्तव्य भासता है तो समज ले कि चित्त अपने को परमात्मा में डूबता बचाकर तुमको धोखा दे रहा है । यही प्रमाद है ।

हृदय की पवित्रता, शांति और आनंद से ही ध्यानावस्था प्राप्त हो सकती है । इसी एकान्त और पवित्र अवस्था में धर्म के रहस्यभूत उच्च विचार आ प्राप्त होते हैं । चित्त अपने उद्‌गमस्थान आत्मदेव के निकट पहुँचता है । मन रूपी तरंग आत्मा रूपी सागर के वक्षस्थल पर भागदौड़ छोड़कर शांत होने लगता है, सागर में विलीन होकर सागर होने लगता है ।

इस शांत अवस्था में व्यक्तित्व का झरना विकसित होकर आगे बढने लगता है और शाश्वत सनातन सत्य कैवल्य पद में निमग्न होता है । यह एक परम आनंदमय स्थिति है । इसी अवस्था में साधक को महान गुरुत्व की झाँकी मिलती है । निर्भयता, सत्यता, अमरता आदि दैवी

गुण इसी अवस्था में सद्‌गुरु की ओरसे शिष्य में संक्रमित होते हैं ।

हे प्रिय आत्मन् ! परमात्मस्वरूप सद्‌गुरुदेव ने दिखाये हुऐ साधना पथ पर चलकर चित्त की इस ध्यानावस्था में पहुंच कर उन दिव्य गुणों का आकर्षण कर । अपने चित्ततंत्र में सद्‌गुरु का वह दिव्य अमृत ठूस ठूंस कर भीतर भर ले और आनंदमय हो जा । आनंदमय ईश्वर का अस्तित्व तेरे पावन हृदय में ही निहित है । ब्राह्ममूहुर्त में शांत एकांत स्थान में ध्यानस्थ होकर इस सनातन सत्य को पा ले और निहाल हो जा ।

□ □ □

अपनी ओर

संध्या हो रही है । पक्षी अपने घोंसले की ओर वापस लौट रहे हैं । चारों और शांति है । खुद प्रकृति भी अपनी गति को मानो समेट रही है ।

प्रिय साधक ! तुम भी अपने अन्तर देश की ओर लौट जाओ । इस प्राकृतिक संध्या का उपयोग कर लो । स्नानादि से प्रफुल्लित बन कर, आसनस्थ होकर बैठ जाओ । संध्याकाल में मन शीघ्रता से हृदय मंदिर के अन्तर प्रदेश में, शांति के परम धाम में प्रवेश कर जायगा ।

जीवन बहुत अल्प है। वासनाएँ प्रबल हैं। संसार के लिये, शरीर के लिये पूरा दिन बिताया। अब थोड़ा समय अपने आप के लिये भी तो बीताओ! ईश्वर के लिये, गुरुअमृत के लिये भी कुछ घड़ियाँ निकालो। वे बहुत कम माँगते हैं और इतना ही कि स्वयं को, अपने आपको जान लो। बस, इतना ही।...और इसी में साधना का पूरा रहस्य निहित है, क्योंकि अपने आपको जान लेने से तुम गुरु को भी जान लोगे और परमात्मा को भी। जो परमात्मा है, जिस परम तत्त्व में गुरु रमण करते हैं वही तुम्हारा भी उद्गमस्थान है। जीवन की संध्या ढले उससे पहले, दिन और रात्रि के इस संधिकाल में तुम इस रहस्य में एक गोता मार लो। किसान एक कण कण से अन्न का भंडार भर लेता है। कंजूस एक पाई पाई इकट्ठी करके धन का खजाना गाड़ लेता है। हे अध्यात्म मार्ग के प्यारे पथिक! तुम भी अपने आयु की संध्याओं में बैठकर ध्यान के द्वारा परमात्मा से अपना एकत्व जानकर रहस्यमय खजाने को पा लो। तुम वही हो।

लोग कहते है: 'अय मानव! याद रख। तू मिट्टी है और मिट्टी में मिल जायगा।' परन्तु तत्त्ववेत्ता गुरुलोग कहते हैं: 'ओ भोले महेश! अपना स्वरूप जान। तू आत्मा है।'

यह सत्य है कि देह मिट्टी है और मिट्टी में मिल जायगा। लेकिन...इससे अधिक उन्नत परम सत्य में

प्रतिष्ठित महापुरुषों का पवित्र अनुभव कहता है कि मिट्टी में मिलनेवाला देह तुम नहीं हो। तुम अविनाशी आत्मा हो। मिट्टी में देह मिलेगी, तुम नहीं। तुम्हारे सिवा जो कुछ है वह सब मिट्टी है, नश्वर है। मिट्टी का रूप कितना ही बड़ा हो, सुन्दर हो, मनभावन हो लेकिन आखिर वह नाशवान है। समस्त नामरूप के साथ मृत्यु अनिवार्यतः जुड़ा हुआ है। व्यक्तित्व नामरूप से ओतप्रोत है। अतः हे प्यारे! तुम इससे दूर रहो।

इन्द्रियों को शांत करो, उनकी चंचलता को मंद कर दो। चित्त को आनंद के आभूषण पहनाकर अन्तर्देश में प्रवेश करा दो। संसार के क्रिया-कलापों का विस्मरण कराके उसको हृदयगुहा में रमण करा दो। देहरूप मिट्टी का संग छुड़ाकर अमिट आत्मा का परिचय करा दो!

चित्त को बार बार आनंद के सागर में डूबाकर उसे जता दो कि तुम मिट्टी नहीं हो, अविनाशी आत्मा हो, नामरूप से पर परमात्मा हो। यही सर्व धर्मों का सार है। इसी में तुम्हारा अमरत्व है। देह से आज तक कोई अमर नहीं हुआ है न होगा। आत्मस्वरूप से तुम शुद्ध और परम पवित्र हो। देहभाव छोड़ दो और अपने को आत्मभाव में जगा दो और आनन्दमय हो जाओ।

स्वामी बनने की कोशिश न करो क्योंकि तुम स्वामी हो ही। महान बनने के लिए मजदूरी न करो। तुम महान हो ही। केवल यह जानना है। व्यक्तित्व के

विकास की प्रक्रिया समय के अंतर्गत है लेकिन पूर्णता का अनुभव अनन्त में है । तुम समय के नहीं हो, तुम अनन्त के हो । यही जानकर सब आयास छोड़कर आत्मा में विश्राम पाओ ।

तुम्हारे अन्दर जो सबसे महान तत्त्व है । उसे जानो । उसीकी उपासना करो । सबसे महान जो तत्त्व है वह और तुम एक हो । यह जानना ही सर्वोत्तम उपासना है । यही परमात्मा की सच्ची उपासना है ।

हे पथिक ! अपने यह परम लक्ष्य को समज लो । तुममें जो सबसे महान तत्त्व है उसी को तुम परमात्मा कहते हो । अब बताओ, तुमसे परमात्मा कितना दूर है ?

सब स्वप्नों को विस्मरण की कंदरा में फेंक दो । इस सांध्य ध्यान की पावन अवस्था में तुम्हारे भीतर के परमात्मा की आवाज सुनो । सुनकर उसे समजो । समझकर उसे देखो । देखकर उसे जानो । जानकर उसका अनुभव करो कि तुम वही हो कि नहीं । 'तत्त्वमसि ।'

ध्यान के वक्त संसार से अलग हो जाओ, असंग हो जाओ । संसार स्वप्न का बना हुआ है । शरीर उस स्वप्न का आधार है । शरीर से असंग अनुभव कर लिया तो समग्र संसार से असंग हो ही गये ।

क्या तुम यह स्वप्न देखते ही रहोगे ? क्या तुम प्रमाद से इस विकट बंधन में पड़े ही रहोगे ? उठो, जागो और लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाय तब तक रुको नहीं ।

हर एक संध्या का ध्यान इस बंधन पर प्रहार है । इस प्रहार में क्रूरता नहीं, परिश्रम नहीं, आयास नहीं लेकिन प्रेमावस्था है, विश्राम है, शांति है । यह शांति ऐसी गंभीर है कि जिसमें परमात्मा की वाणी के सिवाय और कुछ सुनाई नहीं देता । परमात्मा कहते हैं : 'तत्त्वमसि ।' तू वही है ।

परम शांति आत्मा का स्वभाव है, तुम्हारा स्वभाव है । ॐ शांतिः शांतिः शांतिः । परम शांतिः । अनिर्वचनीय शांतिः ।

अरे मन ! फिर बाहर कहाँ जा रहा है ? फिर नामरूप का क्यों चिन्तन कर रहा है ? मेरे प्यारे मन ! आ जा तू इस अलौकिक आनन्द सागर में । तू बार बार भागेगा......मैं बार बार तुझे रिझाकर अमृतमय कर दूँगा, क्योंकि मैं अमृतस्वरूप हूँ । गुरुप्रसाद से यह मैंने जान लिया है ।

खूब शांतिः..........! परम शांतिः...........! अनिर्वचनीय शांतिः...........! ॐ..........ॐ........

□ □ □

पवित्रता : परमधाम का पथ

हम मंदिर में जाते हैं तो स्नानादि से शुद्ध होकर जाते हैं, स्वच्छ वस्त्र पहनकर जाते हैं। परमात्मा को पाने के लिए पवित्रता अत्यंत आवश्यक है। पवित्रता वह कूंजी है जिससे परमात्मा तक पहुँचानेवाले ध्यान का द्वार खुलता है।

ध्यान का द्वार खटखटाते हुए साधक को परमात्मा कहते हैं :

याद रखो............हमेशां याद रखो। केवल पवित्र अंतःकरणवाले ही मुझे देख सकते हैं। जिस प्रकार वासनावान जीव भोग की इच्छा तीव्रता से करता है उसी प्रकार तुम भी ऐसी तीव्रतासे पावित्र्य की आकांक्षा जगाओ। पावित्र्य के लिये निरन्तर प्रयत्नशील रहो। मेरे चिन्तन से तुम्हारा हृदय पवित्र होगा। भक्त प्रह्लाद ने यह रहस्य ठीक जाना था। उसने मेरी स्तुति करते हुए कहा था कि, 'हे प्रभो! जैसी प्रीति अविवेकी जनों को विषयों के लिए होती है वैसी प्रीति मुझे आपके लिए हो जाय। आपका स्मरण करते करते मेरा हृदय ऐसे प्यार से परिप्लावित हो जाय।'

हे मोक्षमार्ग के यात्री! जब तुम्हारा दिल मेरे प्यार में भर जायगा, पवित्र हो जायगा तब मैं तुमसे दूर नहीं रहूँगा। तुम अपने को मेरे शक्ति-सिन्धु पर निर्भर रहने

दो। आयास न करो....खोजो नहीं। ध्यान के शांत एकान्त चिदाकाश में मेरा अस्तित्व जानो। यह ज्ञान, मेरे पर निर्भरता और आत्मसमर्पण तुमको बचा लेगा। किसी प्रकार का भय मत रखो। क्या तुम मुझमें नहीं हो? क्या मैं तुममें नहीं हूँ? परस्पर ऐक्य का भाव लेकर ही तुम साधना पथ पर चले हो यह क्यों भूल जाते हो?

हृदय की पवित्रता से ही यह अमृत भीतर जम सकता है।

मृत्यु सर्वत्र है। संसार की सभी चीजों को वह निगल रहा है। मृत्यु और परिवर्तन आत्मा के सिवा तमाम पदार्थों को लागू होते हैं। पावित्र्य द्वारा ही आत्मा की अमरता अचलता जानी जाती है। पावित्र्य ही ज्ञान का पथ है। उसीके द्वारा निर्भयता, स्वतंत्रता, स्वरूपानुभव प्राप्त होता है।

जब प्रलोभनों की प्रचंड वायु चले, वासनाएँ भड़क उठे, मनोवृत्तियाँ चंचल हो जाय, पवित्रता लुप्त होने लगे तब हृदयगुहा में मुझे बुलाओ, आर्तनाद से मुझे पुकारो। मैं सुनूँगा, अवश्य सुनूँगा... और तुम्हारे पास आऊँगा, तुम्हारे भीतर प्रकट होऊँगा। क्या तुमने सुना नहीं है कि : 'कीड़ी के पग नेवर बाजे सो भी साहब सुनत है!'

जो हृदयपूर्वक मुझे बुलाते हैं उनको मैं कभी छोड़ता नहीं हूँ। हृदयपूर्वक बुलाओ, श्रद्धापूर्वक बुलाओ।

मैं संसार नहीं हूँ। संसार से परे आत्मा हूँ। संसार तो एक मृत कलेवर है। संसार के पदार्थों का

बाह्य विस्तार देखकर भ्रम में मत पड़ो । आत्मा पदार्थ के रूप में है न विचार के रूप में। वह शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, आनंदमय, निराकार, निर्विकार है जिसमें कोई कलंक, पाप, बंधन या सीमा नहीं है ।

हे चैतन्य-कण! हृदय की गहराई में जाकर देखो कि तुम वही हो। तुमको इसका अनुभव होगा ही ।...... और यही मानवजीवन का लक्ष्य है।

सदैव याद रखो, हर क्षण याद रखो, हर श्वास याद रखो कि मैं तुम्हारे साथ हूँ ।

मैं तुम्हारी सब निर्बलताओं के लिए शक्ति हूँ ।
मैं तुम्हारे समस्त पापों के लिए क्षमा हूँ ।
मैं तुम्हारी तमाम शंकाओं का समाधान हूँ ।
मैं तुम्हारे सर्व प्रश्नों का जवाब हूँ ।

मैं तुम्हारी आत्मा हूँ । आत्मा संबंधी अन्य सर्व विचारों को छोड़ दो। मेरी और तुम्हारी आत्मा अलग है यह विचार अज्ञानजन्य है, निर्बलता की पैदाश है ।

प्रकाश के साथ उठो और जानो कि मैं आत्मा हूँ। मैं ही तुम्हारी आत्मा हूँ। मेरे धाम का मार्ग है पवित्रता। इसीमें मोक्ष है ।

शिवोऽहम् । सच्चिदानन्दोऽहम् । शुद्ध स्वरूपोऽहम् । शाश्वतोऽहम् । सर्वोऽहम् ।

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ।

★ ★ ★

कूद पड़ो मौन के महासागर में

ध्यान के एकान्त कक्ष में चिदाकाश में स्पंदन उठा : शांति मौन में निवास करती है । शांति के लिए तुम्हें बलवान, अत्यंत बलवान होना पड़ेगा। इन्द्रियों की चंचलता वैराग्य की प्रबल अग्नि में भस्म कर दोगे तभी मौन अवस्था प्राप्त होगी ।

तुम इस संसार के रेगिस्तान के यात्री हो। देर न करो अन्यथा नष्ट हो जाओगे । अपने साथ सद्‌विचारों का पथ प्रदर्शक रखो । जीवंत श्रद्धा के जल का संग्रह रखो । मृगतृष्णाओं से सावधान रहो । बाह्य पदार्थों के आकर्षण में फँसो नहीं। उनके प्रलोभन का परित्याग करके अंतर्मुखता के एकान्त की ओर जानेवाले मार्ग पर आगे बढो । बहुसंख्य बहिर्मुख लोगों का अनुकरण छोड़कर एकाकी, निस्पृह अंतर्मुख महात्माओं का अनुगमन करो। कैवल्य-पद की यात्रा के पथिक बनो ।

अंतरतम में बल एकत्र करो। मारो छलांग! भौतिकता के पाश से अपने चित्त को छुड़ाकर कूद पडो परमात्मा रूपी महासागर में। सुख सिन्धु में अपने को डूबा दो। यही अंतिम कर्तव्य है। तुम पाओगे कि तुम भी वही परमात्म-सूर्यकी रश्मि हो। भौतिकता तो तुम्हारी कल्पना मात्र है।

जल्दी करो। कहीं विलंब के कारण पछताना न पड़े। उत्कट तड़पन, जीवंत जिज्ञासा और प्रबल श्रद्धा रूपी घोडों को चाबूक से फटकारो। आवश्यक लगे तो अपनेको समाप्त कर दो। निकल पड़ो मुक्ति के राह पर। एक भी विघ्न

को आगे न आने दो। तुम्हारा लक्ष्य अति उन्नत है। बलवान बनो। शक्ति जुटाओ। आत्मानुभव के मार्ग में शक्ति के समान मूल्यवान अन्य कोई शब्द नहीं है। आरंभ में, अंत में निरन्तर शक्तिमान रहो। स्वर्ग-नर्क, देव-दानव इन सबसे निर्भय होकर अपने लक्ष्य की ओर आगे बढो।

परमात्मा स्वयं तुम्हारे भीतर बसकर तुम्हारी सेवा कर रहा है। तुम पर कोई विजय नहीं पा सकता यदि तुम अपनी दिव्य असलियत को जान लो। परमात्मा के साथ एकत्व ही सर्व अंतर्दृष्टियों का सार है।

विश्वास करते हो? अपने में विश्वास करो। अपने में विश्वास नहीं करोगे तो ईश्वर में कैसे विश्वास करोगे? संदेह के समान कोई पाप नहीं। संदेह को विष समझकर उससे बैर करो। यही सबसे बड़ी निर्बलता है। अपने में संदेह करना ही अपनेको पतित करना है। किसीसे भी, स्वयं परमात्मा से भी भयभीत न बनो। परमात्मा तो प्रेम करने योग्य हैं, भय करने योग्य नहीं। परमात्मा ही तुम्हारी आत्मा है। स्वयं से भय कैसा?

तुमको स्वयंको ही अपनी रक्षा करनी होगी। जो स्वयंको सहाय करता है उसीको परमात्मा सहाय करते हैं।

'आत्मैव आत्मनो बन्धुः आत्मैव रिपुरात्मनः।'

हे अपने आपके स्वामी! हे अपने आपके मित्र! हे अपने आपके साक्षी! कब तक गैरत्व की कल्पनाओं में घबड़ाता रहेगा.... गोते खाता रहेगा.... जन्मता रहेगा... मरता रहेगा.... ? अब उस खिलवाड़ को छोड़। अजन्मा होकर जन्मों की झंझटों में क्यों फँसता है? शाश्वत होकर नश्वर में क्यों उलझता है?

तू अपनी महिमा में जाग। धिक्कार है उन यक्ष, गंधर्व और किन्नरों को जो तेरी सेवा में लालायित न हों। देवों ने और प्रकृति ने शपथ खायी है ब्रह्मवेत्ता की सेवा में तत्पर रहने की। अपने ब्रह्मस्वभाव में जाग जा। फिर देख, तेरी सेवा में कुदरत हाजिर है कि नहीं।

★ ★ ★

भौतिकता से उपर उठो

ध्यानावस्था में बिजली कौंध गयी। चित्तन्त्र झनझना उठा। चिदाकाश में गुरुदेव के शब्दों ने प्रकाश का आकार लिया : 'वत्स! तुम्हारी श्रद्धा कहाँ है? क्या तुम पशु हो कि प्रत्येक विघ्न में कंपायमान हो जाते हो? जब तक तुम अपनी देहात्म-बुद्धि पर बिजय नहीं पाओगे तब तक सत्य का अनुभव नहीं हो सकेगा।

क्या तुम मृत शरीर हो? भौतिक मलिनता के कीचड़ में तुम कब तक नाचते रहोगे? क्या तुम इतने प्रसिद्ध हो? संसार के लिए तुम इतने आवश्यक हो? तुम्हारे बिना संसार का क्या होगा यह चिन्ता है?

निश्चयात्मिका बुद्धि से मन की हीनता को छोड़ो और मुक्त हो जाओ।

यदि तुम अविनाशी के लिए पुरुषार्थ करते हो तो मृत्यु तुम्हें स्पर्श नहीं कर सकेगा। मृत्यु को तुम भूल ही जाओगे। तुम अमर हो जाओगे।

सत्य को ही अपना निवासस्थान बनाओ। जीवन के परिवर्तनशील अनुभव तुम्हारे लिए दुखद नहीं बनेंगे। शरीर को जाने दो। उसमें आसक्ति करना व्यर्थ है। मन से अपने को मुक्त कर लो। पाशविक वृत्ति पर विजय पाना ही समस्त सदाचार-शास्त्रों का सार है। स्त्री-पुरुष भाव को, भय-शोक, निद्रा, क्षुधा-तृषा आदि वृत्तियोंको छोड़ दो। शव में आसक्ति न करो। शरीर शव ही तो है। उसके साथ शव का ही व्यवहार करो। उसको सुनहले वस्त्र से ढको नहीं। वह मल है। आत्मा ही परम शुद्ध है। आत्मविचार ही अमरत्व है। अमरत्व के विचार से तुम सनातन सत्य तक पहुँच जाओगे।

साहसिक और निडर बनो। जागृत और बलवान बनो। क्या तुमको आत्मानुभव की कामना है? तो मेरे लाल! शरीर की चिन्ता करने का समय नहीं है।

तुम सत्य के पुत्र हो। तुम्हारा स्वरूप सत्य है। आत्मिक जीवन रूपी निर्मल जल में डूबकी लगाओ। निर्भय रहो। जीवन के सुख और दुःख से परे होना सीखो। तुम आत्मा हो। ध्यान के द्वारा अंतरतम में प्रवेश करो। तुम्हारे मूल स्वभाव को जान लो। वहाँ तुम्हें अनुभव होगा कि तुम्हारे धार्मिक पुरुषार्थ में तुम सही हो। कभी निष्फलता मिले तो चिन्ता न करो। भय और निर्बलता भौतिक है यह जान लो। शरीर स्वप्न का एक घोंसला है। उसी में भय और निर्बलता का निवास है। तुम अपने तात्त्विक स्वभाव में निर्भय और मुक्त हो।

शक्ति का गीत गाओ वत्स! मुक्ति का संगीत बजाओ। तुम अमृतपुत्र हो। जीवन को किसी भी साधन के द्वारा आत्माभिमुख करो।

❀ पा लो अपने आत्म-खजाने को ❀

"संसार को आप रख नहीं सकते, ईश्वर को छोड नहीं सकते। संसार को थामना असम्भव है, ईश्वर को हटाना असम्भव है। फिर भी आज तक ईश्वर को जाना नहीं।

भगवद्प्राप्ति जैसा सरल मार्ग दुनियाँ में कोई नहीं। अतः अपने आत्म-खजाने को पा लो।

इस नन्हीं पुस्तिका के एक एक वाक्य में उपनिषद्-शास्त्रों का, फकीरी वचनों का आत्मिक अनुभव छलकता मिलेगा। काश ! वह अनुभव तुम्हारा बन जाय।

सात्त्विक और पवित्र आचरण करते हुए इस विचारों को बार बार हृदयगम्य करो। अवश्य लाभ होगा।"

— प. पू. संतश्री आशारामजी बापू

आवरण : नटवर स्मृति प्रिन्टर्स, अहमदाबाद